बुद्धवर्ष २५४४, वैशाख पूर्णिमा, १८ मई, २००० वर्ष २९ अंक ११

धम्मवाणी

सन्तिवादोति सन्तिवादो मुनि ताणवादो लेणवादो सरणवादो अभयवादो अच्चुतवादो अमतवादो निब्बानवादोति– एवं मुनि सन्तिवादो।

– महानिद्देसपालि

शांतिवादी मुनि भगवान बुद्ध त्राणवादी हैं, संरक्षणवादी हैं, शरणवादी हैं, अभयवादी हैं, अच्युतपदवादी हैं, अमृतवादी हैं, (परमपद) निर्वाणवादी हैं – ऐसे शांतिवादी हैं भगवान बुद्ध।

बुद्ध जैसा सुखवादी कौन होगा?

बुद्ध और बुद्ध की शिक्षा पर "दुक्खवादी" होने का मिथ्या लांछन भारत में तो सदियों से प्रचलित है ही, बुद्धानुयायी देशों को छोड़ कर पश्चिमी देशों में भी यह कुछ अंश में फैला, जिसका कुप्रभाव बहुत स्पष्ट है। हमारे यहां तो अत्यंत उच्चकोटि के अनेक विद्वान और धर्मवेत्ता इस मिथ्या मान्यता के शिकार हुए। इसी कारण जन-साधारण पर भी इसका गहरा प्रभाव पड़ा। विपश्यना साधना और भगवान बुद्ध की मूल वाणी के संपर्क में आने के पूर्व मैं स्वयं इस भ्रांति का शिकार था। आओ, इस हानिकारक भ्रांति को दूर करें।

वादी तीन प्रकार के होते हैं –

(१) वादी वे होते हैं जो किसी मत की स्थापना करते हैं और उसे सत्य सिद्ध करने के लिए वाद-विवाद करते हैं। बुद्ध ऐसे वादी नहीं हैं। दुक्खवाद उनका स्थापित वाद नहीं है जिसके लिए वे विवाद करते। वे तो किसी भी मान्यता के लिए विवाद किया जाना गलत मानते थे। तभी कहा –**विवादं भयतो दिस्वा, अविवादं च खेमतो।**

(२) वादी वे होते हैं जो कि अपने परंपरागत सिद्धांत की मान्यता के प्रति समर्पित होकर उसे फैलाने का काम करते हैं। जैसे आतंकवादी आतंक में ही विश्वास करते हैं और उसे फैलाने में जी-जान लगाते हैं। कोई भी नहीं कह सकता कि बुद्ध इस प्रकार दुक्ख फैलाने में लगे थे।

(३) वादी का एक शाब्दिक अर्थ है 'बोलने वाला'। 'वाद' बोलने को कहते हैं। बुद्ध बहुत उपदेश देते हैं, इस माने में 'वादी' कहे जा सकते हैं। परंतु बुद्ध सदा धर्म का उपदेश देते थे। इसलिए हम देखते हैं कि उनके जीवनकाल में लोग उन्हें – **सच्चवादी, तथवादी, कम्मवादी, किरियवादी, कालवादी, पियवादी, हितवादी, यथावादी तथाकारी** कहते थे। वे सदा सत्य धर्म की वाणी बोलते थे, अतः उनके विरोधी भी उन्हें **धम्मवादी** ही कहते थे।

उनके जीवन की एक घटना –

प्रसिद्ध ब्राह्मण आश्वलायन भगवान बुद्ध का समकालीन था। वह प्रखर विद्वान होने के कारण तत्कालीन ब्राह्मण समाज का नेता था। जब ब्राह्मणों ने उससे निवेदन किया कि वह बुद्ध से वाद-विवाद करे तो उसने यह कहकर ना कर दिया कि वे **धम्मवादी** हैं। मैं किसी **धम्मवादी** से कैसे विवाद करूं? उनके बड़े से बड़े विरोधी ने उन्हें कभी **दुक्खवादी** नहीं कहा। **दुक्खवादी** तो तब कहते जबकि वे सदा दुक्ख की ही चर्चा करते। सुख का कभी नाम भी नहीं लेते। ऐसा तो था नहीं।

जिस पर दुक्खवादी होने का मिथ्या आरोप लगाया गया, वस्तुतः उस बुद्ध जैसा सुखवादी आज तक संसार में कोई नहीं हुआ। जो दुक्खवादी होता है, वह केवल दुक्ख की ही चर्चा करेगा, सुख की चर्चा क्यों करेगा?

भगवान ने दुक्ख की चर्चा अवश्य की है पर यह चर्चा दुक्ख से छुटकारा पाने के लिए है। उन्होंने सुख की चर्चा की है उचित सुख प्राप्त करने के लिए।

दुक्ख की उत्पत्ति का क्रम समझाते हुए उन्होंने बताया –

... एवमेतस्स केवलस्स दुक्खक्खन्धस्स समुदयो होति।

– इस प्रकार संपूर्ण दुक्ख के ढेर की उत्पत्ति होती है।

उसके बाद यह बताया कि –

... एवमेतस्स केवलस्स दुक्खक्खन्धस्स निरोधो होति।

–इस प्रकार संपूर्ण दुक्खों के ढेर का निरोध हो जाता है यानी दुक्ख जड़मूल से नष्ट हो जाते हैं।

दुक्ख की चर्चा करते हुए उन्होंने **जाति पि दुक्खा** आदि ११ प्रकार के दुक्ख गिनाते हुए समझाया कि जब तक जन्म-मरण का भव-चक्र चलता रहेगा, तब तक इस प्रकार के दुक्खों में से गुजरते रहना पड़ेगा। इस भव-चक्र से मुक्त होना ही सही माने में दुक्ख-विमुक्ति है। इसी के लिए उन्होंने सहज, सरल, क्रियात्मक विधि सिखायी जो कि वादविवाद जन्य थोथी दार्शनिक मान्यता नहीं है बल्कि ठोस फलदायिनी सक्रिय विद्या है। बुद्ध ने स्वयं अनुभूतियों का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया और ऐसा ही अनुभूतिजन्य अध्ययन करना अपने शिष्यों को सिखाया। भगवान

बुद्ध की सारी शिक्षा स्वानुभूतियों पर आधारित है, "शास्त्र वचन प्रमाण" की अंध मान्यता पर आधारित नहीं है।

विभिन्न वेदनाएं –

अब तो वेदना का एक ही अर्थ रह गया – पीड़ा यानी दुक्ख। परंतु उन दिनों वेदना 'अनुभूति' को कहते थे। उन्होंने अत्यंत वैज्ञानिक ढंग से अनुभूतियों का विश्लेषणात्मक वर्गीकरण किया है। एक वर्गीकरण में दो प्रकार की वेदनाएं बतायीं – **कायिक और चेतसिक**। दूसरे वर्गीकरण में वेदना तीन प्रकार की बतायीं।

तिस्सो, इमा वेदना, भिक्खवे

– भिक्षुओं, अनुभूतियां तीन प्रकार की होती हैं।

कतमा तिस्सो? – कौन-सी तीन?

सुखा वेदना, दुक्खा वेदना, अदुक्खमसुखा वेदना।

–सुख वेदना, दुक्ख वेदना और तीसरी ऐसी वेदना जिसमें न सुख है न दुक्ख।

इसका उल्लेख बुद्ध-वाणी में हमें अनेक बार मिलता हैं। कहीं भी बुद्ध केवल **दुक्खा वेदना** कह कर नहीं रह गये हैं।

जो इस भ्रम में हैं कि बुद्ध ने केवल दुक्ख की ही चर्चा की, उनकी यह भ्रांति बुद्ध-वाणी पढ़ने से दूर होगी।

सामान्य स्तर पर ये तीन अनुभूतियां कही गयीं। लेकिन ध्यान की सूक्ष्म अनुभूतियों के आधार पर वैज्ञानिक ढंग से विश्लेषण-विभाजन करते हुए भिन्न-भिन्न संदर्भ में उन्होंने इन वेदनाओं की विभिन्न संख्याएं गिनायी हैं। जैसे कि कहीं पांच प्रकार की, तो कहीं छः, कहीं अट्ठारह, कहीं छत्तीस और कहीं एक सौ आठ प्रकार की वेदनाएं बतायी हैं। केवल दुक्ख वेदना ही नहीं कहीं।

सुख वेदना –

उन्होंने सुखद वेदनाएं अनेक बतायी गयी हैं। जैसे कि –

आंख, कान, नाक, जीभ और त्वचा के संस्पर्श से होने वाले अनुभवों के पांच **काम-सुख**।

नासमझ लोग इन्हें ही परम सुख मान कर भ्रमित होते हैं परंतु बुद्ध कहते हैं कि इन कामरागजन्य ऐंद्रिय सुखों से कहीं अधिक प्रणीततर यानी उन्नत और श्रेष्ठ प्रथम ध्यान का सुख जिसे **प्रीति-सुख** कहा गया –

सविचारं सवितक्कं विवेकजं पीतिसुखं।

[यहां एक महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक तथ्य ध्यान देने योग्य है। बुद्ध के समय 'ध्यान-सुख' के लिए 'आनंद' शब्द का प्रयोग नहीं होता था। उसे 'प्रीति-सुख' कहा जाता था। बुद्ध पूर्व के वेदों में भी 'आनंद' शब्द का ऊंचे आध्यात्मिक अर्थ में प्रयोग नहीं हुआ है। हम देखते हैं कि वेदों में इस शब्द का प्रयोग गर्हित अर्थ में किया गया है। जैसे कि –

आनन्दायस्त्रीषखूं। – यजुर्वेद ३०, ६

यानी कामभोग के आनंद के लिए स्त्री के साथ मित्रता करो।

वेदों में आनंद के मुकाबले सुख शब्द अच्छे अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। भगवान बुद्ध के समय तक भी 'आनंद' शब्द हीन अर्थ में ही प्रयुक्त होता रहा, जैसे कि कामभोग के रागरंग में निमग्न अज्ञानियों को फटकारते हुए भगवान ने कहा –

को नु हासो, किमानन्दो, निच्चं पज्जलिते सति।

–क्या हास-परिहास में लगे हो! क्या आनंद में लगे हो! देखो भीतर सतत प्रज्वलन है।

इसी प्रकार तृष्णा के बारे में कहा –

यायं तण्हा पोनोब्भविका नन्दीरागसहगता तत्रतत्राभिनन्दिनी....।

–यह जो पुनर्जन्म देने वाली, कामराग के आनंद की साथिन कभी वहां, कभी वहां मजा चाहने वाली तृष्णा है....।

एक अन्य प्रसंग में हम देखते हैं –

भगवान द्वारा आनंद उपभोग त्यागे जाने का विरोध करता हुआ मार कहता है –

नन्दति पुत्तेहि पुत्तिमा – पुत्रों वाला पुत्रों से आनंदित होता है।

गोमिको गोहि तथेव नन्दति –गायों वाला गायों से आनंदित होता है।

उपधी हि नरस्स नन्दना – विषय-भोग ही मनुष्य के आनंद हैं।

न हि सो नन्दति यो निरूपधि – जो विषय-भोग से विरत हैं वे आनंदित नहीं हैं।

यानी उन दिनों तक 'आनंद' शब्द विषय-भोग के रसास्वादन के अर्थ में ही प्रयुक्त होता था।

परंतु आगे जाकर पातंजलि तक पहुँचते-पहुँचते 'आनंद' शब्द का उत्कर्ष हुआ और 'प्रीति-सुख' का अपकर्ष। पातंजलि ने बुद्ध द्वारा व्याख्यात प्रथम ध्यान में 'वितर्क' और 'विचार' के साथ 'प्रीति-सुख' का प्रयोग न करके 'आनंद' शब्द का प्रयोग किया है। यथा –

वितर्क विचार आनन्द अस्मिता रूपानुगमात् सम्प्रज्ञातः।

– योगसूत्र - १०]

–– हां, तो भगवान कह रहे हैं कि कामभोग के सुख से प्रणीततर है प्रथम ध्यान का प्रीति-सुख।

कुछ लोग इसे ही परम शांति-सुख मान लेते हैं जो कि गलत है। इससे भी प्रणीततर सुख है – द्वितीय ध्यान का अवितर्क, अविचारजन्य प्रीति-सुख –**अवितक्कं अविचारं समाधिजं पीति सुखं।**

कुछ लोग इसे ही परम शांति-सुख मान लेते हैं जो कि गलत है। इस से भी प्रणीततर सुख है – तीसरे ध्यान का समता सुख – **उपेक्खको सतिमा सुखविहारी।**

कुछ लोग इसे ही परम शांति-सुख मान लेते हैं जो कि गलत है। इससे भी प्रणीततर चौथे ध्यान का सुख है –समताभाव सहित सजगता की परिसुद्धि के कारण प्राप्त हुई अदुक्ख-असुख अनुभूति – **अदुक्खमसुखं उपेक्खासतिपारिसुद्धं।**

कुछ लोग इसे ही परम शांति-सुख मान लेते हैं जो कि गलत है। इससे भी प्रणीततर है पांचवें ध्यान की अनंत आकाश की अनुभूति – **आकासनञ्चायतनं।**

कुछ लोग इसे ही परम शांति-सुख मान लेते हैं जो कि गलत है। इससे भी प्रणीततर है छठवें ध्यान की अनंत विज्ञान की अनुभूति – **विञ्ञाणञ्चायतनं।**

कुछ लोग इसे ही परम शांति-सुख मान लेते हैं जो गलत है। इससे भी प्रणीततर है सातवें ध्यान की अकिंचन की अनुभूति –

आकिञ्चञ्ञायतनं।

कुछ लोग इसे ही परम शांति-सुख मान लेते हैं जो कि गलत है। इससे भी प्रणीततर है आठवें ध्यान की न संज्ञा और न असंज्ञा की अनुभूति – **नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं।**

कुछ लोग इसे ही शांति-सुख मान लेते हैं जो कि गलत है। इससे भी प्रणीततर है इसके परे की अनुभूति जहां वेदना और संज्ञा भी निरुद्ध हो जाते हैं – **सञ्ञावेदयितनिरोधं।**

यही वस्तुतः शरीर और चित्त के परे, इंद्रियातीत, नित्य, शाश्वत, ध्रुव निर्वाणिक सुख है। यही परम शांति-सुख है। इसे ही भगवान ने कहा –**निब्बानं परमं सुखं।**

निर्वाण का यह परम सुख तब प्राप्त होता है जबकि पूर्वसंचित संस्कारों का उपशमन हो जाता है यानी उनका पूर्णतया निष्कासन हो जाता है। तभी इस अवस्था तक पहुँचा हुआ एक भिक्षु कहता है –

पमोज्जबहुलो भिक्खु, पसन्नो बुद्ध सासने।
अधिगच्छे पदं सन्तं, सङ्खारूपसमं सुखं॥

– बुद्ध की शिक्षा से प्रसन्न चित्त हुए प्रमोदबहुल भिक्षु ने कर्म-संस्कारोंके उपशमन सुख को और निर्वाण के परम शांतिपद को प्राप्त किया है।

आठों ध्यान तक भी यह अवस्था प्राप्त नहीं होती। बोधिसत्त्व सिद्धार्थ गोतम गृह त्याग कर मगध आये, यद्यपि श्रमण परंपरा के ध्यानाचार्य अलारकलाम के ध्यानकेंद्र की एक शाखा कपिलवस्तु में भी थी। परंतु उनका प्रधान ध्यान केंद्र मगध में था और वहीं आचार्य स्वयं उपस्थित थे। वहां दो-तीन दिनों में ही उनसे सातों ध्यान सीख कर भी बोधिसत्त्व ने देखा कि यह अत्यंत सुखदायी तो है परंतु परम मुक्त अवस्था नहीं है। अतः आचार्य से अनुमति लेकर ध्यानाचार्य उद्दक रामपुत्त के पास आठवां ध्यान सीखने गये। आचार्य उद्दक ने आठवें ध्यान का केवल विवरण सुना था। परंतु स्वयं कर नहीं पाये थे। बोधिसत्त्व ने वह विवरण सुन कर इसे दो-तीन दिन में ही अधिगम कर लिया। तदनंतर आचार्य उद्दक ने भी इसे अधिगम किया। परंतु बोधिसत्त्व ने देखा कि यह सातवें ध्यान से अधिक सुखदायी होते हुए भी अंतिम अवस्था नहीं है। अभी कुछ कर्म-संस्कार अंतरतम की गहराइयों में सुषुप्त अवस्था में विद्यमान हैं जो कि पुनर्जन्मदायी हैं। उनके रहते इसे नितांत भव-विमुक्ति की अवस्था नहीं कहा सकता। अतः तदनंतर उन दिनों की बहुप्रचलित देहदंडन की श्रमण साधना का छः वर्ष तक निष्फल अभ्यास किया। तत्पश्चात अपने ही प्रयास से सदियों से विलुप्त हुई पुरातन विपश्यना विधि खोज कर नितांत भव-मुक्त अवस्था प्राप्त की। गृहत्याग से सम्यक संबोधि प्राप्त करने तक की अपनी साधनाओं का स्पष्ट वर्णन भगवान बुद्ध ने अपनी वाणी में स्वयं किया है।

उन्होंने किसी संजय नामक पंडित के पास जाकर कपिल-दर्शन नहीं सीखा। मूल बुद्ध-वाणी के भारत से विलुप्त हो जाने पर किसी ने ऐसी कपोल-कल्पित बात उनकी साधनाचर्या पर थोप दी होगी। सिद्धार्थ किसी दर्शन शास्त्र के अध्ययन से बुद्ध बने, यह नितांत तथ्य विरुद्ध कथन है। वे स्वयं कहते हैं कि मैं सभी दार्शनिक मान्यताओं से ऊपर उठ गया हूं। किसी दार्शनिक मान्यता के आधार पर बुद्ध बने होते तो यह कैसे कहते?

दूसरे ध्यान में चित्तवृत्ति की निरोध अवस्था प्राप्त होती है, चौथे ध्यान में कायनिरोध की अवस्था प्राप्त होती है। तदनंतर चित्त कायम रहता है। पांचवें से आठवें ध्यान तक उसे अनंत तक फैलाने की विभिन्न विधियां हैं। इतना कर लेने पर भी कुछ कर्म-संस्कार बचे रहते हैं जो कि भव-संसरण के कारण बनते हैं। क्योंकि यह अवस्था नित्य नहीं है, अपरिणामी नहीं है। इसके आगे के अभ्यास द्वारा सारे कर्म-संस्कारोंके उपशमन की स्थिति प्राप्त करके चित्त निरोध की अवस्था में परम शांति-सुख निर्वाण का साक्षात्कार होता है। यह सुख अतुलनीय है। तभी भगवान ने कहा –

यञ्च कामसुखं लोके, यञ्चिदं दिवियं सुखं।
तण्हक्खयसुखस्सेते, कलं नाग्घन्ति सोळसिं'न्ति॥

–यह जो कामभोग का सुख है और यह जो दिव्य सुख है, वे तृष्णाक्षय के परम सुख की तुलना में सोलह में से एक भाग भी नहीं है।

बोधिसत्त्व सिद्धार्थ गोतम को जब सम्यक संबोधि के साथ भवमुक्त अवस्था प्राप्त हुई तो उन्होंने अपनी इस उपलब्धि पर यही उद्गार प्रकट किये थे –

विसङ्खारगतं चित्तं, तण्हानं खयमज्झगा।

–(मेरा) चित्त संस्कार-मुक्त हो गया है, (मुझे) तृष्णा के क्षय की अवस्था उपलब्ध हो गयी है।

भवमुक्ति के नित्य, शाश्वत, ध्रुव शांति-सुख की जो परम चरम निर्वाणिक अवस्था बुद्ध ने स्वयं उपलब्ध की, जीवन भर करुणचित्त से मुमुक्षुओं को वही सिखाते रहे। स्वयं भी सुखी, औरों के सुख में भी सहायक।

यों भिन्न-भिन्न स्तर की अनुभूतियों के लिए उन्होंने 'सुख' शब्द का ही प्रयोग किया क्योंकि तत्कालीन भाषा में अलग-अलग परिमाण के सुखों के लिए अलग-अलग शब्द थे ही नहीं। और बुद्ध भला कितने नये शब्द गढ़ते!

वैसे अनेक सुखों के नाम उन्होंने गिनाये भी हैं। परंतु सब प्रकार के सुखों का नामकरण नहीं किया जा सका। फिर भी कुछ एक सुखों का तुलनात्मक वर्णन करते हुए बताया कि कौन-सा हीन है, कौन-सा प्रणीत। जैसे कि –

(१) गृहस्थ-सुख तथा प्रव्रज्या-सुख –
इन दो में प्रव्रज्या सुख श्रेष्ठ है।

(२) काम-भोगों का सुख तथा अभिनिष्क्रमण का सुख –
इन दो में अभिनिष्क्रमण का सुख श्रेष्ठ है।

(३) लौकिक-सुख तथा लोकोत्तर-सुख –
इन दो में लोकोत्तर-सुख श्रेष्ठ है।

(४) सास्रव-सुख तथा अनास्रव-सुख –
इन दो में अनास्रव-सुख ही श्रेष्ठ है।

(५) भौतिक-सुख तथा अभौतिक-सुख –
इन दो में अभौतिक-सुख श्रेष्ठ है।

(६) आर्य-सुख तथा अनार्य-सुख –
इन दो में आर्य-सुख श्रेष्ठ है।

(७) शारीरिक-सुख तथा चैतसिक-सुख –
इन दो में चैतसिक-सुख श्रेष्ठ है।

(८) प्रीति-सहित सुख, प्रीति-विरहित सुख –
इन दो में प्रीति-विरहित सुख श्रेष्ठ है।

(९) आस्वाद-सुख तथा उपेक्षा-सुख –
इन दो में उपेक्षा-सुख श्रेष्ठ है।

(१०) असमाधि-सुख तथा समाधि-सुख –
इन दो में समाधि-सुख श्रेष्ठ है।

(११) प्रीति-आलंबन सुख तथा अ-प्रीति-आलंबन सुख –
इन दो में अ-प्रीति-आलंबन सुख श्रेष्ठ है।
(१२) आस्वाद-आलंबन-सुख तथा उपेक्षा-आलंबन-सुख –
इन दो में उपेक्षा-आलंबन-सुख श्रेष्ठ है।
(१३) रूप-आलंबन-सुख तथा अरूप-आलंबन-सुख –
इन दो में अरूप-आलंबन-सुख श्रेष्ठ है।

इतना ही नहीं, बुद्ध ने और भी अनेक प्रकार के सुख गिनाये हैं। जैसे – **कायिकसुखं, चेतसिकसुखं, दिब्बसुखं, मानुसकसुखं, लाभसुखं, सक्कारसुखं, यानसुखं, सयनसुखं, इस्सरियसुखं, आधिपच्चसुखं, गिहिसुखं, सामञ्ञसुखं, सासवसुखं, अनासवसुखं, उपधिसुखं, निरूपधिसुखं, सामिससुखं, निरामिससुखं, सप्पीतिकसुखं, निप्पीतिकसुखं, ज्ञानसुखं, विमुत्तिसुखं, कामसुखं, नेक्खम्मसुखं, विवेकसुखं, उपसमसुखं, सम्बोधसुखन्ति।**

अतः हम देखते हैं कि दुक्ख की तुलना में इस महापुरुष ने इतने अधिक प्रकार के सुखों की केवल गिनती ही नहीं गिनायी, उनका केवल विवेचन ही नहीं किया बल्कि उनमें जो श्रेष्ठ हैं उनका अनुभव करना सिखाया। सुख प्राप्त करने की अनेक विधियां बतायीं, जैसे कि -

चित्तं दन्तं सुखावहं – चित्त का दमन सुखदायी है।
चित्तं गुत्तं सुखावहं – चित्त की सुरक्षा सुखदायी है।
धम्मो चिण्णो सुखावहो – धर्म का आचरण सुखदायी है।

उनके द्वारा दुक्ख की जहां चर्चा हुई है, अधिकांशतः उसके कारण और निवारण को लेकर ही हुई है और निवारण का अभ्यास करना सिखाया है। इस पर भी जब हम उन पर यह लांछन लगाते हैं कि वे दुक्खवादी थे, उनके पास दुक्ख के अतिरिक्त कुछ और बोलने या सिखाने को था ही नहीं, तो उनकी मूल शिक्षा के बारे में अपनी अनभिज्ञता ही प्रकट करते हैं।

आओ, आज बुद्धपूर्णिमा के शुभ अवसर पर भगवान बुद्ध द्वारा प्रणीत दुक्ख-निवारण की इस अनमोल विद्या का अभ्यास करते हुए परम सुख प्राप्ति की ओर बढ़ने का संकल्प करें और सभी प्रकार के दुक्खों से मुक्ति पाएं। इसी में सब का मंगल समाया हुआ है।

मंगलमित्र, सत्यनारायण गोयन्का

दूहा धरम रा

करुणासागर बुद्धजी! थारो ही उपकार।
धरम दियो मंगळ करण, सुखी करण संसार॥
जदि संबुध ना ढूंढता, सांच धरम रो पंथ।
बढतो जातो भटकतां, भवभय दुक्ख अनंत॥
या हि बुद्ध री बंदना, अरहत हेत प्रणाम।
द्वेस द्रोह सारा छुटै, चित्त हुवै निस्काम॥
आ ही साची बंदगी, नमस्कार परणाम।
जीवन जीऊं धरम रो, करूं न कूड़ा काम॥
आज बुद्ध रो दिवस है, जगै बोधि री जोत।
पिंड पिंड जगमग हुवै, मिलै सांति सुख स्रोत॥
आज बोधि रो दिवस है, जागै बोधि महान।
मिटै अंधेरो पाप रो, हुवै परम कल्याण॥

मेसर्स गो गो गारमेंट्स
३१ –४२, भांगवाड़ी शॉपिंग आर्केड,
१ला माला, कालबादेवी रोड, मुंबई - ४००००२.
☎ ०२२- २०५०४१४
की मंगल कामनाओं सहित

दोहे धर्म के

नमन करूं मैं बुद्ध को, कैसे करुणागार।
दुःख मिटावन पथ दिया, सुखी करन संसार॥
नमस्कार उनको करूं, जो सम्यक सम्बुद्ध।
जो भगवत अरहंत जो, जो पावन परिशुद्ध॥
याद करूं जब बुद्ध की, करुणा अमित अपार।
तन मन पुलकित हो उठे, चित छाये आभार॥
यही बुद्ध की वंदना, विनय नमन आभार।
जागे बोध अनित्य का, होवें दूर विकार॥
देख सुखद संवेदना, आस्वादन न होय।
भय देखें सुख स्वाद में, बुद्ध वंदना सोय।
देख दुखद संवेदना, द्वेष न जाग्रत होय।
भय देखें जब द्वेष में, बुद्ध वंदना होय॥

मेसर्स मोतीलाल बनारसीदास
• महालक्ष्मी मंदिर लेन, ८ महालक्ष्मी चैंबर्स, २२ वार्डन रोड, मुंबई-४०००२६.
☎-४९२३५२६, • सनस प्लाजा, शॉप ११-१३, १३०२, सुभाष नगर, पुणे-४११००२.
☎-४८६१९०, • दिल्ली-२९११९८५, • पटना- ६७१४४२, • वाराणसी- ३५२३३१,
• बैंगलोर- २२१५३८९, • चेन्नई- ४९८२३१५, • कलकत्ता २४३४८७४
की मंगल कामनाओंसहित

'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक: राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३, दूरभाष : (०२५५३) ८४०८६, ८४०७६.
मुद्रण स्थान : अक्षर चित्र प्रिंटिंग प्रेस, ६९- बी रोड, सातपुर, नाशिक-४२२००७. **बुद्धवर्ष २५४४, वैशाख पूर्णिमा, १८ मई, २०००**

वार्षिक शुल्क रु. २०/-, विदेश में US $ 10
आजीवन शुल्क रु. २५०/-, " US $ 100

'विपश्यना' रजि. नं. १९१५६/७१.
Regn. No. AR/NSM-46/2000,

Concessional rates of Postage under
Licenced to post without Prepayment

Posting day- **Purnima of Every Month**
Posted at Igatpuri-422403, Dist. Nashik

If not deliverd please return to:-
विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - ४२२४०३
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
दूरभाष : (०२५५३) ८४०७६
फैक्स: (०२५५३) ८४१७६
Website: www.vri.dhamma.org
E-mail: <dhamma@vsnl.com>